आई. एल. आर. पंजाब और हरियाणा

(न्यायमूर्ति गुरविंदर सिंह गिल के सम्मुख)
सुमित सिंगला-याचिकाकर्ता
बनाम
कला मंदिर साड़ी और ज्वैलर्स -प्रतिवादी
2022 (ओ एंड एम) का सी. आर. एम.एम. संख्या 34617
17 अगस्त, 2022

प्रक्राम्य लिखत अधिनियम, धारा 138, सीमा अधिनियम, धारा 18-शिकायत और समन आदेश को रद्द करना-ऋण पावती ऋण लेने के 3 साल से आगे जारी चेक-ऋण की वसूली के लिए सीमा-आरोप को साबित करने के लिए एक शिकायत को सूक्ष्म विवरण और साक्ष्य शामिल करने के लिए विश्वकोश होने की आवश्यकता नहीं है-उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों को शिकायत को खारिज करने के लिए उन आधारों पर लागू नहीं किया जा सकता है जिनके लिए साक्ष्य की आवश्यकता होती है।

सीमा अधिनियम की धारा 18 के तहत स्वीकृति और अनुबंध अधिनियम का 25 धारा के अर्थ के भीतर वादे के बीच अंतर है। अनुबंध अधिनियम का 25-धारा का प्रावधान का प्रभाव सीमा को नवीनीकृत करने का होगा-याचिका खारिज।

माना जाता है कि उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों को उन आधारों पर शिकायत को रद्द करने के लिए लागू नहीं किया जा सकता है जिनके लिए साक्षय की आवश्यकता होगी।

(पैरा 7)

आगे कहा कि सीमा अधिनियम 1963 की धारा 18 के तहत स्वीकृति और अनुबंध अधिनियम की खंड 25 (3) के अर्थ के भीतर 'वचन' के बीच जो अंतर देखा जा सकता है, वह बहुत महत्वपूर्ण है।

(पैरा 14)

आगे कहा कि उक्त दोनों प्रावधान इस बात पर प्रकाश डालते हैं कि ऋणदाता का भुगतान प्राप्त करने का अधिकार और ऋण लेने वाले का भुगतान करने का दायित्व कभी भी समय के साथ समाप्त नहीं होता है, लेकिन यह वह उपाय है जो समाप्त हो जाता है।लेकिन कुछ परिस्थितियों में इस तरह के उपचार को नया जीवन मिल सकता है।भारतीय अनुबंध की धारा 25 (3) ऋण या देयता का भुगतान करने के लिए देनदार द्वारा किए गए मुकदमो के परिणामस्वरूप मुकदमे के माध्यम से भुगतान को लागू करने के लिए एक समय-बाधित उपाय को पुनर्जीवित करती है। ऐसे मामले में, जहां भुगतान को एक मुकदमा द्वारा लागू किया जा सकता है, इसका मतलब है कि इसमें अभी भी कानूनी रूप से लागू करने योग्य ऋण की प्रकृति है जैसा कि अधिनियम की धारा 138 के 'स्पष्टीकरण' में विचार किया गया है।

(पैरा 15)

इसके अलावा, यह अभिनिर्धारित किया गया कि अनुबंध अधिनियम की धारा 25 के प्रावधानों को अलग कर दिया गया है, उचित परिस्थितियों में इसके अनुप्रयोग का प्रभाव सीमा को नवीनीकृत करने का होगा।

(पैरा 24)

आर. एस. राय, वरिष्ठ अधिवक्ता अरुण लूथरा, अधिवक्ता और कमल बहल, अधिवक्ता, याचिकाकर्ता की ओर से।

न्यायमूर्ति गुरविंदर सिंह गिल।

(1) याचिकाकर्ता दिनांक 26.9.2018 (नत्थी पी-2) के साथ-साथ दिनांकित 13.11.2019 (नत्थी पी-3) के आदेश को रद्द करने की मांग करता है, जिसके तहत उसे समन करने का आदेश दिया गया है ताकि वह परक्राम्य लिखत अधिनियम (इसके बाद 'अधिनियम' के रूप में संदर्भित) की धारा 138 के तहत अपराध के लिए मुकदमे का सामना कर सके।

(2) प्रतिवादी/शिकायतकर्ता कला मंदिर साड़ी और ज्वैलर्स, इसकी मालिक श्रीमती मधु बाला ने एस. जी. एम. स्टील प्राइवेट लिमिटेड और उसके निदेशकों सुमित सिंगला (याचिकाकर्ता) और टीना सिंगला के खिलाफ एक शिकायत दर्ज की जिसमें यह आरोप लगाया गया है कि शिकायतकर्ता ने आरोपी के अनुरोध करने पर अग्रिम ऋण ₹25 लाख की राशि, दिनांक 14.12.2011 दो अलग-अलग बैंक लेनदेन द्वारा से हस्तांतरित की थी, क्योंकि शिकायतकर्ता के आरोपी के साथ पारिवारिक संबंध थे।यह आरोप लगाया गया है कि अभियुक्त ने आश्वासन दिया था कि मूल राशि की वापसी तक उक्त राशि पर 12 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज का भुगतान किया जाएगा। इसमें विशेष रूप से यह कहा गया है कि आरोपी ब्याज का भुगतान कर रहा था, जैसा कि सहमति हुई थी और अंत में, दिनांक 06.07.2018 को ₹25 लाख एक चेक संख्या 015973 दिनांक 06.07.2018, यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, करनाल, जिसे बैंक खाता संख्या 309201010035144 से आरोपी द्वारा जारी किया गया था, लेकिन इसे प्रस्तुत करने पर, 'खाता बंद' टिप्पणी दिनांक 18.07.2018 के साथ वापस कर दिया गया था। इसके बाद शिकायतकर्ता ने आवश्यक नोटिस जारी किया और चूंकि उक्त नोटिस के बावजूद आरोपी द्वारा कोई भुगतान नहीं किया गया था, इसलिए शिकायतकर्ता ने आरोपी के खिलाफ शिकायत दर्ज कराई।

(3) शिकायतकर्ता ने प्रारंभिक साक्षय का नेतृत्व किया जिसके आधार पर अभियुक्तों को विद्वान न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी, हिसार द्वारा दिनांक 13.11.2019 (नत्थी पी-3) के आदेश के माध्यम से तलब किया गया था।

(4) याचिकाकर्ता का विद्वान अधिवक्ता मुख्य रूप से निम्नलिखित आधारों पर शिकायत दिनांक 26.9.2018 (नत्थी पी-2) के साथ-साथ समन आदेश दिनांक 13.11.2019 (नत्थी पी-3) पर आरोप लगाता है:-

(i) कि वर्ष 2011 में ऋण अग्रिम किया गया है, उसी की वसूली 3 साल के बाद वर्जित हो गई और चूंकि विचाराधीन चेक अर्थात दिनांक 06.07.2018 का चेक ऋण लेने के 6 साल से अधिक समय के बाद जारी किया गया था, इसलिए इसे 'कानूनी रूप से लागू करने योग्य दायित्व' के निर्वहन के लिए जारी किया गया नहीं कहा जा सकता है ताकि अधिनियम की धारा 138 के प्रावधानों को आकर्षित किया जा सके।

(ii) अधिनियम की धारा 138 के स्पष्टीकरण में "कानूनी रूप से प्रवर्तनीय" शब्दों की व्याख्या ऋण आदि की वसूली के लिए लेने नागरिक उपचार की उपलब्धता के संदर्भ में की जानी चाहिए और वह भी सीमा के नियमों के अधीन;

(iii) कि केवल चेक जारी करने को सीमा अधिनियम 1963 की धारा 18 के संदर्भ में ऋण की 'स्वीकृति' नहीं माना जा सकता है, ताकि ऋण की वसूली के लिए सीमा बढ़ाई जा सके और यह कि, किसी भी मामले में, चूंकि चेक भी ऋण लेने के तीन साल से अधिक समय तक जारी किया गया था, इसलिए शिकायतकर्ता ऋण की 'स्वीकृति' का अनुरोध भी नहीं कर सकता है क्योंकि सीमा अधिनियम की धारा 18, विशेष रूप से निर्धारित करती है कि 'स्वीकृति', यदि कोई हो, तो निर्धारित सीमा की समाप्ति से पहले की जानी चाहिए, जो तत्काल मामले में चेक जारी करने से बहुत पहले समाप्त हो गई थी।

(5) विद्वान अधिवक्ता, अपनी उपरोक्त दलीलों को आगे बढ़ाने के लिए, दिल्ली उच्च न्यायालय के दो फैसलों पर भरोसा करता है:- अर्थात् (1) प्रजन कुमार जैन बनाम रवि मल्होत्रा, और (2) मेसर्स विजय पॉलिमर प्राइवेट लिमिटेड बनाम मेसर्स विनय अग्रवाल। विद्वान अधिवक्ताकार ने आगे कहा है कि समन्वित पीठों को पहले से ही कानूनी मुद्दे पर पकड़ है क्योंकि समान मामलों यानी सी. आर. एम.-एम.-34658-2022 और सी. आर. एम.-एम.-31440-2022 में प्रस्ताव का नोटिस जारी किया गया है।

(6) मैंने याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता को सुना है।चूंकि याचिकाकर्ता ने असम्मानित चेक के संबंध में अपने दायित्व के संबंध में एक मुद्दा उठाया है, इसलिए शुरुआत में यह उल्लेख करने की आवश्यकता है कि अधिनियम की धारा 118 और 139 में चेक धारक के पक्ष में कुछ अनुमान शामिल हैं, विशेष रूप से ऋण या दायित्व के अस्तित्व के संबंध में। हालाँकि, इस तरह की धारणाओं का खंडन करने की आवश्यकता नहीं है और जिन्हें इस तरह की धारणाओं को ध्वस्त करने के लिए कुछ सबूतों का नेतृत्व करके खंडन किया जा सकता है। यह स्पष्ट रूप से विचारण न्यायालय के समक्ष होगा कि कोई व्यक्ति साक्षय का नेतृत्व करने में समर्थ हो सकता है न कि उच्च न्यायालय के समक्ष माननीय सर्वोच्च अदालत एस. नटराजन बनाम समा धर्मन में, दाण्डिक अपीलीय सं 1524 - वर्ष 2014 के उच्च न्यायालय के एक निर्णय को उलटते हुए, जिसने शिकायत को रद्द कर दिया था, जिसे सीमा द्वारा वर्जित किया गया था, निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया था:-

"7.हमारी राय में, उच्च न्यायालय ने इस आधार पर शिकायत को रद्द करने में गलती की कि ऋण या देयता को सीमा से रोक दिया गया था और इसलिए, अभियुक्त के खिलाफ कोई कानूनी रूप से लागू करने योग्य ऋण या देयता नहीं थी। उच्च न्यायालय के समक्ष मामला ऐसी प्रकृति का नहीं था जो उच्च न्यायालय को इस स्तर पर ऐसा निश्चित निष्कर्ष निकालने के लिए राजी कर सके। ऋण पर समय की पाबंदी थी या नहीं, यह सबूत पेश किए जाने के बाद ही तय किया जा सकता है, क्योंकि यह कानून और तथ्य का एक मिश्रित सवाल है।"

(7) यद्यपि एक शिकायत में ऐसे सभी तथ्यों का उल्लेख होना अपेक्षित है जो अभियुक्त के आपराधिक दायित्व को आकर्षित करते हैं, लेकिन उसे विश्वकोश होने की आवश्यकता नहीं है ताकि सभी सूक्ष्म विवरणों और साक्षयों को शामिल किया जा सके जो आरोपों को साबित करने के लिए आवश्यक होंगे। यह उचित स्तर पर होगा कि आरोपों को साबित करने के लिए सबूत दिए जाएँ। इस बात पर कोई विवाद नहीं हो सकता है कि सीमा के संबंध में प्रश्न कानून और तथ्यों का एक मिश्रित प्रश्न है, विशेष रूप से जब सीमा के विस्तार का मुद्दा हो सकता है। इस प्रकार, उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों को उन आधारों पर शिकायत को रद्द करने के लिए लागू नहीं किया जा सकता है जिनके लिए साक्षय की आवश्यकता होगी।

(8) आगे बढ़ने से पहले, प्रक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के प्रावधानों को ध्यान में रखना उचित है, जो निम्नानुसार हैं:-

138. खाते में धन की अपर्याप्तता आदि के लिए चेक का अनादर—

जहां किसी व्यक्ति द्वारा किसी ऋण या अन्य दायित्व के पूर्ण या आंशिक निर्वहन के लिए उस खाते से किसी अन्य व्यक्ति को किसी अन्य राशि के भुगतान के लिए किसी बैंकर के साथ किसी व्यक्ति द्वारा रखे गए खाते से निकाला गया कोई भी चेक बैंक द्वारा बिना भुगतान किए वापस कर दिया जाता है, या तो इस कारण से कि उस खाते में जमा की गई राशि चेक का सम्मान करने के लिए अपर्याप्त है या यह उस बैंक के साथ किए गए समझौते द्वारा उस खाते से भुगतान करने के लिए निर्धारित राशि से अधिक है, ऐसे व्यक्ति को अपराध करने वाला माना जाएगा और इस अधिनियम के किसी अन्य प्रावधान पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, उसे कारावास से दंडित किया जाएगा, जिसे दो वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है या जुर्माने के साथ जो चेक की राशि के दोगुने तक बढ़ सकता है, या दोनों के साथ:

बशर्ते कि इस धारा में निहित कुछ भी तब तक लागू नहीं होगा जब तक कि -

(क) चेक को बैंक में उस तारीख से छह महीने की अवधि के भीतर या इसकी वैधता की अवधि के भीतर, जो भी पहले हो, प्रस्तुत किया गया है;

(ख) प्रापक या धारक, जैसा भी मामला हो, चेक के नियत समय में, चेक की वापसी के बारे में बैंक से जानकारी प्राप्त होने के तीस दिनों के भीतर, चेक के ड्रॉअर को लिखित रूप में नोटिस देकर उक्त राशि के भुगतान की मांग करता है; और

(ग) इस तरह के चेक का आहरणकर्ता उक्त सूचना की प्राप्ति के पंद्रह दिनों के भीतर, चेक के नियत समय में, प्राप्तकर्ता को या, जैसा भी मामला हो, धारक को उक्त राशि का भुगतान करने में विफल रहता है।

स्पष्टीकरण— इस धारा के प्रयोजनों के लिए, "ऋण या अन्य देयता का अर्थ है कानूनी रूप से लागू करने योग्य ऋण या अन्य देयता।"

(emphasis supplied)

(9) जबकि अधिनियम की धारा 138 ऋण या दायित्व के निर्वहन में जारी किए गए चेक के अपमान को संदर्भित करती है, उसी के लिए स्पष्टीकरण परिभाषित करता है कि ऐसा ऋण या दायित्व कानूनी रूप से लागू करने योग्य दायित्व होना चाहिए। इस न्यायालय के समक्ष सवाल यह होगा कि क्या उस दिन जब विचाराधीन चेक जारी किया गया था, यानी 6.7.2018 पर, क्या यह कहा जा सकता है कि ऋण का भुगतान करने का दायित्व अभी भी मौजूद था और इसकी वसूली को न्यायालय में लागू किया जा सकता था। इसे निर्धारित आदेश के लिए, किसी को उन नियमों और शर्तों पर गौर करना होगा जिनके तहत ऋण अग्रिम किया गया था, विशेष रूप से इसकी वापसी के लिए किसी भी अवधि के निर्धारण के संबंध में या यह कि क्या यह एक मुक्त ऋण था।इस संबंध में शिकायत में किए गए प्रासंगिक कथन नीचे पुनः प्रस्तुत किए गए हैं:-

“2. कि अभियुक्त व्यक्तियों के शिकायतकर्ता के साथ पारिवारिक संबंध थे और उन्होंने शिकायतकर्ता से संपर्क किया और शिकायतकर्ता से 25 लाख रुपये अग्रिम देने का अनुरोध किया क्योंकि उन्हें पैसे की सख्त जरूरत थी। शिकायतकर्ता ने पारिवारिक संबंधों और अभियुक्त की पैसे की सख्त आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए ₹5,00,000/- एचडीएफसी बैंक द्वारा और ₹20,00,000/- बैंक ऑफ इंडिया द्वारा, आरोपी के खाते में दिनांक 14.12.2011 को हस्तांतरित किए। अभियुक्तों ने आश्वासन दिया कि वे मूल राशि की वापसी तक प्रति वर्ष @12% ब्याज का भुगतान करेंगे।

3. यह कि अभियुक्त ने ऊपर बताए गए दायित्व के मौजूदा बकाया और कानूनी रूप से लागू करने योग्य के निर्वहन के लिए सहमति के अनुसार ब्याज का भुगतान किया और अंत में दिनांक 06.07.2018 पर, अभियुक्त ने शिकायतकर्ता के पक्ष में एक चेक सं.015973, दिनांकित 6.7.2018, ₹25,00,000/- के

लिए उनके खाते संख्या 309201010035144, यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, करनाल जारी किया।

(10) उपरोक्त अनुमानों के अवलोकन से संकेत मिलता है कि मूल राशि की वापसी तक ऋण राशि पर 12 प्रतिशत की दर से ब्याज देना था। इसमें कोई समय सीमा निर्धारित नहीं की गई है और याचिकाकर्ता ने उस पर लगातार सहमत वार्षिक ब्याज का भुगतान किया है और याचिकाकर्ता ने बाद में बकाया के भुगतान के लिए एक चेक जारी किया है, सीमा अधिनियम 1963 की धारा 18 के संदर्भ में "दायित्व की स्वीकृति" के संबंध में बहस की जा सकती है। धारा 18 निम्नानुसार है:

18. लिखित रूप में स्वीकृति का प्रभाव।

(1) जहाँ, किसी संपत्ति या अधिकार के संबंध में किसी वाद या आवेदन के लिए निर्धारित अवधि की समाप्ति से पहले, ऐसी संपत्ति या अधिकार के संबंध में दायित्व की स्वीकृति उस मुकदमा द्वारा लिखित रूप में की गई है जिसके खिलाफ ऐसी संपत्ति या अधिकार का दावा किया गया है, या किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा जिस द्वारा से वह अपना अधिकार या दायित्व प्राप्त करता है, उस समय से सीमा की एक नई अवधि की गणना की जाएगी जब पावती पर इस तरह से हस्ताक्षर किए गए थे।

(2) जहां पावती वाला लेखन दिनांकित नहीं है, उस समय का मौखिक साक्षय दिया जा सकता है जब उस पर हस्ताक्षर किए गए थे; लेकिन भारतीय साक्षय अधिनियम, 1872, (1872 का 1) के प्रावधानों के अधीन, इसकी सामग्री का मौखिक साक्षय प्राप्त नहीं किया जाएगा।

स्पष्टीकरण।

इस खंड के प्रयोजनों के लिए,

(क) एक पावती पर्याप्त हो सकती है, हालांकि यह संपत्ति या अधिकार की सटीक प्रकृति को निर्दिष्ट करने के लिए छोड़ देती है, या यह मानती है कि भुगतान, वितरण, प्रदर्शन या आनंद का समय अभी तक नहीं आया है या उसके साथ भुगतान करने, वितरण करने, प्रदर्शन करने या आनंद लेने की अनुमति देने से इनकार किया गया है, या इसे बंद करने के दावे के साथ जोड़ा गया है, या संपत्ति या अधिकार के हकदार व्यक्ति के अलावा किसी अन्य व्यक्ति को संबोधित किया गया है;

(बी) हस्ताक्षरित शब्द का अर्थ है या तो व्यक्तिगत रूप से या इस ओर से विधिवत अधिकृत एजेंट द्वारा हस्ताक्षरित; और

(ग) किसी डिक्री या आदेश के निष्पादन के लिए आवेदन को किसी संपत्ति या अधिकार के संबंध में आवेदन नहीं माना जाएगा।

(emphasis supplied)

(11) सीमा अधिनियम 1963 की धारा 18 इस बात में कोई संदेह नहीं छोड़ती है कि मुकदमा दायर करने के लिए सीमा के निर्वाह के दौरान दायित्व या ऋण की स्वीकृति केवल तभी की जाती है जब ऐसी स्वीकृति की तारीख से सीमा की नई अवधि की गणना की जाएगी।

(12) सीमा के विस्तार से संबंधित कुछ हद तक समान प्रावधान भारतीय अनुबंध अधिनियम, 1872 की धारा 25 (3) में पाए जाते हैं, जिसे यहाँ नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है:

25. बिना विचार के समझौता अमान्य है, जब तक कि यह लिखित और पंजीकृत न हो, या किसी कार्य के लिए क्षतिपूर्ति करने का वादा न हो, या सीमा कानून द्वारा वर्जित ऋण का भुगतान करने का वादा न हो।

विचार किए बिना किया गया कोई समझौता अमान्य है, जब तक कि

(1) यह लिखित रूप में व्यक्त नहीं किया जाता है और दस्तावेजों के पंजीकरण के लिए उस समय लागू कानून के तहत पंजीकृत नहीं किया जाता है, और एक-दूसरे के निकट संबंध में खड़े पक्षों के बीच स्वाभाविक प्रेम और स्नेह के कारण किया जाता है; या जब तक कि

(2) यह पूरी तरह से या आंशिक रूप से, एक ऐसे व्यक्ति को क्षतिपूर्ति करने का वादा नहीं है, जिसने पहले ही स्वेच्छा से वचनदाता के लिए कुछ किया है, या कुछ ऐसा जो वचनदाता कानूनी रूप से करने के लिए मजबूर था; या जब तक कि

(3) यह एक वादा है, जो लिखित रूप में किया जाता है और उस व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षरित किया जाता है जिसे इसके साथ आरोपित किया जाता है, या उसके एजेंट द्वारा आम तौर पर या विशेष रूप से उस ओर से अधिकृत, पूरी तरह से या आंशिक रूप से भुगतान करने के लिए, **एक ऐसा ऋण जिसके भुगतान को लेनदार ने लागू किया होगा, लेकिन मुकदमे की सीमा के लिए कानून के लिए।**

इनमें से किसी भी मामले में, ऐसा समझौता एक अनुबंध है।

स्पष्टीकरण 1. इस धारा में कुछ भी वास्तव में दिए गए किसी भी उपहार की वैधता को प्रभावित नहीं करेगा, जैसा कि दाता और अदाता के बीच होता है।

स्पष्टीकरण 2. एक समझौता जिसमें वचनदाता की सहमति स्वतंत्र रूप से दी जाती है, केवल इसलिए अमान्य नहीं है कि विचार अपर्याप्त है; लेकिन न्यायालय द्वारा इस प्रश्न का निर्धारण करने में विचार की अपर्याप्तता को ध्यान में रखा जा सकता है कि क्या वचनदाता की सहमति स्वतंत्र रूप से दी गई थी।

(13) उपर्युक्त दो अधिनियमों के तहत सीमा के विस्तार से संबंधित प्रासंगिक प्रावधानों का मिलान करने से दोनों के बीच एक विवेकपूर्ण अंतर प्रकट होगा:

सीमा अधिनियम की धारा 18	अनुबंध अधिनियम की धारा 25 (3)
18. लिखित रूप में स्वीकृति का प्रभाव	25. बिना विचार के समझौता, अमान्य, जब तक कि यह लिखित और पंजीकृत न हो, या किसी किए गए कार्य के लिए क्षतिपूर्ति करने का वादा न हो, या सीमा कानून द्वारा वर्जित ऋण का भुगतान करने का वादा न हो। बिना विचार किए किया गया समझौता अमान्य है, जब तक कि
(1)जहाँ, किसी संपत्ति या अधिकार के संबंध में किसी वाद या आवेदन के लिए निर्धारित अवधि की समाप्ति से पहले, ऐसी संपत्ति या अधिकार के संबंध में दायित्व की स्वीकृति उस मुकदमा द्वारा लिखित रूप में हस्ताक्षरित की गई है जिसके खिलाफ ऐसी संपत्ति या अधिकार का दावा किया गया है, या किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा जिसद्वारा से वह अपना अधिकार या दायित्व प्राप्त करता है, सीमा की गणना उस समय से की जाएगी जब पावती पर हस्ताक्षर किए गए थे।	(1) x x x (2) x x x (3) यह एक वादा है, जो लिखित रूप में किया जाता है और उस व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षरित किया जाता है, जिससे उस पर आरोप लगाया जाता है, या उसके एजेंट द्वारा आम तौर पर या विशेष रूप से उस ओर से अधिकृत किया जाता है, पूरी तरह से या आंशिक रूप से एक ऋण का भुगतान करने के लिए जिसका लेनदार भुगतान लागू कर सकता है, लेकिन मुकदमे की सीमा के लिए कानून के लिए। इनमें से किसी भी मामले में, ऐसा समझौता एक अनुबंध है।

(14) सीमा अधिनियम 1963 की धारा 18 के तहत एक पावती और अनुबंध अधिनियम की धारा 25 (3) के अर्थ के भीतर एक 'वादे' के बीच का अंतर बहुत महत्वपूर्ण है। जबकि दोनों में सीमा का एक नया प्रारंभिक बिंदु बनाने का प्रभाव है, सीमा अधिनियम के तहत एक 'स्वीकृति' सीमा की अवधि की समाप्ति से पहले सीमा का विस्तार करने के लिए किया जाना चाहिए, जबकि अनुबंध अधिनियम की धारा 25 (3) के तहत ऋण का भुगतान करने का 'वादा' भले ही सीमा द्वारा वर्जित हो, सीमा को नवीनीकृत करेगा।

(15) किसी भी मामले में, उक्त दोनों प्रावधान इस बात पर प्रकाश डालते हैं कि ऋणदाता का भुगतान प्राप्त करने का अधिकार और ऋणकर्ता का भुगतान करने का दायित्व कभी भी समय के साथ समाप्त नहीं होता है, लेकिन यह वह उपाय है जो समाप्त हो जाता है।लेकिन कुछ परिस्थितियों में इस तरह के उपचार को नया जीवन मिल सकता है।भारतीय अनुबंध की धारा 25 (3) ऋण या देयता का भुगतान करने के लिए देनदार द्वारा किए गए मुकदमो के परिणामस्वरूप मुकदमे के माध्यम से भुगतान को लागू करने के लिए एक समय-बाधित उपाय को पुनर्जीवित करती है। ऐसे मामले में, जहां भुगतान को एक मुकदमा द्वारा लागू किया जा सकता है, इसका मतलब है कि इसमें अभी भी कानूनी रूप से लागू करने योग्य ऋण की प्रकृति है जैसा कि अधिनियम की धारा 138 के 'स्पष्टीकरण' में विचार किया गया है।

(16) केरल उच्च न्यायालय की एक खण्ड पीठ डॉ. के. के.रामकृष्णन बनाम डॉ. के. के. पार्थसारथी 3, पर विचार करते हुए निम्नलिखित रूप में रखे गए चेक के अपमान पर दायित्व की प्रवर्तनीयता के संबंध में प्रश्न:

> "9.विचार के लिए जो प्राथमिक प्रश्न उत्पन्न होता है, वह यह है कि क्या निकासी के पक्ष में चेक की डिलीवरी कानूनी रूप से लागू करने योग्य देयता पैदा नहीं करती है?
>
> 10 से 14 x x x x x तक
>
> 15. वर्तमान मामले के उद्देश्य के लिए, इस मामले में विस्तार से जाना आवश्यक नहीं प्रतीत होता है। हालाँकि, यह उल्लेख किया जा सकता है कि धारा 25 (3) के तहत एक वादा ऐसे मामले में भी किया जा सकता है जहाँ राशि की वसूली की सीमा पहले ही समाप्त हो चुकी हो। इस तरह का वादा लिखित रूप में होना चाहिए।यह चेक के रूप में हो सकता है। जब कोई चेक प्राप्तकर्ता को दिया जाता है, तो व्यक्ति बैंक को चेक प्रस्तुत और भुगतान की मांग करने का हकदार होता है। ऐसी स्थिति में, यदि चेक का अनादर किया जाता है, तो धारा 138 के तहत देयता उत्पन्न होगी। अभियुक्त के लिए यह तर्क देना अनुज्ञेय नहीं होगा कि दायित्व कानूनी रूप से प्रवर्तनीय नहीं था।
>
> 15 से 24 x x x x
>
> 25. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, शुरुआत में पूछे गए प्रश्न का उत्तर नकारात्मक में दिया जाता है। यह माना जाता है कि:
>
> **(1) जब कोई व्यक्ति चेक जारी करता है, तो वह भुगतान करने के अपने दायित्व को स्वीकार करता है। धन की अपर्याप्तता के कारण चेक का अनादर होने की स्थिति में वह यह दावा करने**

का हकदार नहीं होगा कि ऋण सीमितता से वर्जित हो गया था और इस प्रकार देयता कानूनी रूप से प्रवर्तनीय नहीं थी। यदि उसके खिलाफ आरोप साबित हो जाता है तो वह दंड के लिए उत्तरदायी होगा।

(17) पी. एन. गोपीनाथन बनाम शिवदासन और अन्य 4 में केरल उच्च न्यायालय के समक्ष एक बाद के मामले में, अभियुक्त का प्रतिनिधित्व करने वाले वकील ने के. के. रामकृष्णन के मामले (ऊपर) में खण्ड पीठ द्वारा लिए गए दृष्टिकोण की शुद्धता के संबंध में संदेह व्यक्त करते हुए प्रस्तुत किया था कि मामले को एक बड़ी पीठ को भेजा जाए। हालाँकि, उक्त निवेदन को निम्नानुसार देखते हुए अस्वीकार कर दिया गया था:

> "8. मैं, इस मामले में तर्क के उद्देश्य से, यह मान लूंगा कि दायित्व समयबद्ध है। मैं ऐसा इसलिए कह रहा हूं क्योंकि निचली अदालतों के समक्ष ऐसी कोई विशिष्ट याचिका नहीं उठाई गई है। यह मानते हुए भी कि यह समय की पाबंदी है, जब चेक लिखा और हस्ताक्षरित किया जाता है, तो निश्चित रूप से आहरणकर्ता द्वारा प्राप्तकर्ता को राशि का भुगतान करने का वादा किया जाता है। ऐसा वादा, भले ही दायित्व वर्जित हो, अनुबंध अधिनियम की धारा 25 (3) को देखते हुए कानून के तहत वैध और लागू करने योग्य है। इसके बाद जब डिलीवरी होती है, तो निकासी पूरी हो जाती है। इस तरह का चेक एक देयता के निर्वहन के लिए जारी किया जाता है, जिसका वादा चेक के तहत ही किया जाता है। ऐसा होने पर, मुझे आगे के विचार के लिए मामले को खण्ड पीठ को भेजने का कोई कारण नहीं दिखता है। याचिकाकर्ता के लिए विद्वान अधिवक्ता का तर्क कि चेक के अलावा एक और समझौता होना चाहिए-ताकि चेक में दिए गए वादे को एक वैध समझौता मानने उद्देश्य के लिए धारा 25(3) स्पष्ट रूप से स्वीकार नहीं किया जा सकता है। चेक में किया गया वादा एक लागू करने योग्य समझौता है जैसा कि अनुबंध अधिनियम की धारा 25 (3) में घोषित किया गया है। उक्त वादे/दायित्व के निर्वहन के लिए जारी (वितरित) चेक इस प्रकार पूरी तरह से धारा 138 के दायरे में आता है।"

(18) इस न्यायालय ने हाल ही में सुल्तान सिंह बनाम तेज प्रताप 5 मामले में एक समान मामले पर विस्तार से विचार किया, जिसमें निम्नलिखित मुद्दे को निर्णय के लिए तैयार किया गया था:

> "i) क्या समयबद्ध ऋण के पुनर्भुगतान के लिए चेक जारी करना भारतीय अनुबंध अधिनियम, 1872 की धारा 25 (3) के अर्थ के भीतर उक्त ऋण का भुगतान करने के लिखित वादे के बराबर होगा?
>
> (ii) यदि पहले प्रश्न का उत्तर उस व्यक्ति के पक्ष में है जिसके पक्ष में चेक जारी किया गया है, तो क्या उक्त वादा अपने आप में कोई "कानूनी रूप से लागू करने योग्य ऋण" पैदा करेगा,

जैसा कि परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 की धारा 138 में कहा गया है?

(iii) क्या वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 482 के तहत वर्तमान याचिका विचारणीय होगी?

(iv) क्या वर्तमान मामले में, याचिकाकर्ता यह साबित करने में समर्थ रहा है कि सीमा की अवधि का प्रारंभिक बिंदु क्या होगा, ताकि यह स्थापित किया जा सके कि चेक सीमा की अवधि समाप्त होने के बाद जारी किया गया था?"

(19) मामला कानून का व्यापक रूप से उल्लेख करते हुए, जारी संख्या (i) और (ii), जैसा कि ऊपर पुनः प्रस्तुत किया गया है, का निर्णय निम्नानुसार किया गया है:

"29. इस प्रकार, प्रासंगिक प्रावधानों के साथ-साथ मुद्दा संख्या (i) और (ii) पर विभिन्न न्यायालयों के निर्णयों पर विचार करने के बाद, यह न्यायालय निर्णायक रूप से यह ठहराता है कि एक समयबद्ध ऋण के पुनर्भुगतान में चेक जारी करना अनुबंध अधिनियम की खंड 25 (3) के अर्थ के भीतर उक्त ऋण का भुगतान करने के लिखित वादे के बराबर है और उक्त वादा अपने आप में एक कानूनी रूप से लागू करने योग्य ऋण या दायित्व पैदा करेगा, जैसा कि परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 द्वारा विचार किया गया है। इस प्रकार, निर्गम संख्या (i) और (ii) का उत्तर इसके द्वारा उस व्यक्ति के पक्ष में दिया जाता है जिसके पक्ष में चेक जारी किया गया। इस प्रकार, केवल उक्त निष्कर्ष पर, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का पहला तर्क खारिज हो जाता है।"

(20) यहां तक कि मुद्दा नं.(iii) याचिकाकर्ता के खिलाफ जवाब दिया गया था। मुद्दा नं.(iv) अनुत्तरित होने के कारण याचिका खारिज कर दी गई।

(21) स्वीकृति "या" प्रतिज्ञा "पर विचार करते समय, एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू इस तरह की" स्वीकृति "या" प्रतिज्ञा "को स्थापित करने के लिए आवश्यक साक्षय की गुणवत्ता और प्रकार के संबंध में होगा। माननीय **सुप्रीम कोर्ट ने, शापूर फ़रीडम मज़्दा बनाम दुर्गा प्रसाद चमारिया 6 में** सीमा अधिनियम की धारा 19 के संदर्भ में ऋण की 'स्वीकृति' पर चर्चा करते हुए कहा कि दायित्व के संबंध में स्वीकार किसी भी रूप में हो सकता है और 'व्यक्त' या 'निहित' हो सकता है, और उस स्वीकृति को उदारता से समझने की आवश्यकता है।

(22) शापूर के मामले (उपरोक्त) पर भरोसा करते हुए, कर्नाटक उच्च न्यायालय ने आदिवेलु बनाम नारायणचारी7 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:

"16. लेकिन, जब शापूर फ्रीडम मजदा (ए. आई. आर. 1961 सुप्रीम कोर्ट 1236) (ऊपर) के मामले में सुप्रीम कोर्ट के फैसले के साथ अधिनियम की धारा 9 के अलावा धारा 2 (बी) में परिभाषित 'वादा' शब्द को ध्यान में रखा जाता है, जिसमें यह माना जाता है कि एक स्वीकारोक्ति 'व्यक्त' या 'निहित' हो सकती है, तो अधिनियम की धारा 25 (3) के तहत आने वाले वादे को 'व्यक्त' होने की आवश्यकता नहीं है। यदि विधायिका का इरादा था कि इस तरह का वादा केवल एक 'स्पष्ट वादा' होना चाहिए, तो उसने ऐसा संकेत दिया होगा, लेकिन 'स्पष्ट' शब्द अधिनियम की धारा 25 (3) में नहीं मिलता है। इसलिए, ऐसा पढ़ना और अधिनियम की धारा 25 (3) के दायरे को केवल "वचन व्यक्त करने" तक सीमित करना उचित नहीं होगा। उपरोक्त दृष्टिकोण में, मैं, **तुलसीराम (ए. आई. आर. 1981 दिल्ली 165) (ऊपर)** के मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय और **एन. ई. एथिराजुलु नायडू बनाम के. आर. चिन्नाकृष्णन चेट्टियार (ए. आई. आर. 1975 मद्रास 333)** के मामले में मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा लिए गए दृष्टिकोण से सहमत नहीं हूं।"

(23) और अंत में, लेकिन कम से कम, सीमा अधिनियम की खंड धारा (1) विशेष रूप से प्रदान करती है कि सीमा अधिनियम में कुछ भी अनुबंध अधिनियम की धारा 25 को प्रभावित नहीं करेगा। सीमा अधिनियम की धारा 29 (1) को नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है:

"29. बचत-(1) इस अधिनियम की कोई भी बात धारा 25 भारतीय अनुबंध अधिनियम, 1872 (1872 का 9) को प्रभावित नहीं करेगी।"

(24) अनुबंध अधिनियम की धारा 25 के प्रावधानों को अलग कर दिया गया है, उचित परिस्थितियों में इसके अनुप्रयोग का प्रभाव सीमा को नवीनीकृत करने का होगा।

(25) सुल्तान सिंह के मामले (उपरोक्त) में इस अदालत के फैसले को देखते हुए, जिसमें हाथ में मौजूद मुद्दे को सीधे निपटाया गया है और के. के. रामकृष्णन के मामले (उपरोक्त) में केरल उच्च न्यायालय की खण्ड पीठ के फैसले के साथ-साथ सर्वोच्च न्यायालय के फैसले शापूर फ्रीडम मजदा के मामले में (ऊपर), भी दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय ने याचिकाकर्ता की ओर से सेवा में दबाव डाला यानी प्रजन कुमार जैन का मामला (ऊपर) और विजय पॉलिमर का मामला (ऊपर) ऐसा नहीं है।

(26) नतीजतन, दिए गए निर्णयों के अवलोकन में सुल्तान सिंह का मामला (ऊपर), के. के. रामकृष्णन का मामला (ऊपर) और शापूर फ्रीडम मजदा का मामला (ऊपर), ऋण के समय-बाधित होने के संबंध में याचिकाकर्ता की ओर से रखी गई दलीलें और ऋण की अग्रिमता के 6 साल से अधिक समय के बाद जारी किए गए चेक का अपमान अधिनियम की धारा 138 के प्रावधानों को आकर्षित नहीं करेगा, क्योंकि यह ऋण कानून द्वारा लागू नहीं किया जा सकता है, इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता है।बल्कि, यह सुरक्षित रूप से माना जा सकता है कि 6.7.2018 पर

जब याचिकाकर्ता द्वारा 14.12.2011 पर अग्रिम ऋण का भुगतान करने के लिए चेक जारी किया गया था, तो वह ऋण की स्वीकृति में जारी किया गया था, और इसके अपमान पर अधिनियम की धारा 138 के तहत कार्रवाई के लिए उत्तरदायी होगा। यह न्यायालय वर्तमान मामले को ऐसा नहीं पाता है जहां दंड प्रक्रिया संहिता धारा **482** के तहत अंतर्निहित शक्तियों को शिकायत को रद्द करने या समन आदेश को रद्द करने के लिए लागू किया जाना चाहिए।

(27) याचिका बिना किसी योग्यता के है और इस खारिज कर दिया जाता है।

डॉ. पायल मेहता

अस्वीकरणः- स्थानीय भाषा मे अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा मे इसे समझ सके और किसी अन्य उद्येश्य के लिए इसका उपयोग नही किया जा सकता। सभी व्यवहारिक और अधिकारिक उद्येश्यों के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणित होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्येश्य के लिए उपयुक्त रहेगा।

Translator (भाषा अनुवादक)

रोशन लाल